ISSN 2348-4977 Visvabharati Patrika

विश्वभारती पत्रिका

सम्पादक

मुक्तेश्वर नाथ तिवारी

फणीश्वरनाथ रेणु पर केन्द्रित

खण्ड ७८

अंक ३-४

आश्विन २०७७ - फाल्गुन २०७७

अक्तूबर २०२० - मार्च २०२१

इस अंक के लेखक

पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु': 'सांईकृपा' ५८, लाल ऐविन्यू, छेहर्टा, अमृतसर– १४३१०५

भारत यायावर : यशवंत नगर, हजारी बाग –८२३०१, (झारखण्ड)

ओम प्रकाश पाण्डेय : गेट बाजार, (एन०जे०पी०), पत्रालय–भक्तिनगर, सिलीगुड़ी–७३४००७ (पं० बंगाल)

ऋचा मिश्र : बी–६०, सेक्टर–७२, नोएडा–२०१३०१ (उत्तर प्रदेश)

आद्या प्रसाद द्विवेदी : मालती कुंज, सिद्धार्थ इन्कलेव (विस्तार), एच०आई०जी० द्वितीय ३२ तारामण्डल, गोरखपुर–२७३०१७

रवि रंजन : हिंदी विभाग, हैदराबाद विश्वविद्यालय, गची वाउली, हैदराबाद–५०००४६

किरण तिवारी : हिंदी विभाग, विमेंस कॉलेज, राँची–८३४००१

रीता सिन्हा : हिन्दी विभाग, वर्द्धमान विश्वविद्यालय, गोलापबाग, बर्द्धमान–७१३१०४

ममता कुमारी : जगदीशपुर, हजारी बाग– ८२५३०३ (झारखण्ड)

ऋषि कुमार : अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, रवीन्द्र भारती विश्वविद्यालय, बी.टी. रोड, कोलकाता–७०००५०

शशिभूषण द्विवेदी : द्वारा सुकुमार दास, नवग्राम, भक्तिनगर, सिलीगुड़ी–७३४००७

सुभाष चन्द्र राय : हिन्दी विभाग, विश्वभारती, शांतिनिकेतन–७३१२३५ (प.बं)

प्रमोद कोवप्रत : प्रोफेसर हिंदी विभाग, कालिकट विश्वविद्यालय, मलाप्पुरम्–६७३६३५ (केरल)

फणीश्वरनाथ 'रेणु' के साहित्य की प्रासंगिकता

ऋचा मिश्र

फणीश्वर नाथ 'रेणु' की रचनाओं का आस्वाद गूंगे की शर्करा है, जिसे मंद-मंद मुस्कुराते हुए निर्वचनीय अनुभव के द्वारा बस पिया जा सकता है और ब्रह्मानंद सहोदर की आत्मीयता भरी तुष्टि का आनंद लिया जा सकता है। १९४०-५० के दशक में लोकप्रिय जन-रचनाकार, आंचलिक साहित्य को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने वाले यशस्वी कहानीकार, उपन्यासकार श्री फणीश्वरनाथ 'रेणु' से आज हिन्दी प्रेमी समाज भलीभांति परिचित है। 'मैला आंचल' और 'परती परिकथा' जैसे उपन्यासों के प्रणेता रेणु ने 'पार्टी का भूत', 'रस प्रिया', 'तीसरी कसम', 'लाल पान की बेगम' जैसी सशक्त कहानियां और अनेक रिपोर्ताज लिखे, जो विषय वैविध्य और संगठन की दृष्टि से अप्रमेय है। उनके साहित्य में जीवन की धूप छांह, मिट्टी पानी, जंगल की वन तुलसी की गन्ध, कोसी मैया की विरल और उच्छल छवियाँ हैं। वे हमें एक साथ चमत्कृत भी करते हैं और आश्वस्त भी। अपनी बेबाक और फक्कड़ रचना शैली के कारण उनमें कबीर की सी एकतानता है, झीनी झीनी चदरिया बुनकर सुर नर मुनियों को भी दरकिनार करने वाली। उनका जीवन सरकंडे के शूलों और उससे उपजे पीड़ा के दंश से फटे पैरों से नापा गया संसार है, जिसे वे चाणक्य की तरह प्रतिशोध के मट्ठे से निर्जीव नहीं करते, बल्कि पीड़ा को क्रीड़ा मान, नंगे पैर उस पर अलमस्त बैरागी की तरह चलते चले जाते हैं। रेणु साहित्य को तथाकथित शिष्ट भाषा और आभिजात्य वर्ग के चश्मे से नहीं मापा जा सकता। उसे जीने के लिए कोसी मैया के कछार पर गीली मिट्टी में अपने अंतर्मन को स्नात करना पड़ेगा। भद्रता का चोला उतारकर, मुसहर की टोली में कोल, मुसहर और धींगड़ के साथ 'बिदापत नाच' देखना पड़ेगा - धृंगा धृगा की धुन पर मृदंग की थाप पर थिरकते हुए, 'मोरे अंगना में आए आली, मैं चाल चलूं मतवाली', गीत को सुनना और गुनना होगा। ऐसा है रेणु का सतत स्पंदित प्राणवान जीवन जो उनकी रचनाओं में सर्वत्र व्याप्त है।

फणीश्वरनाथ रेणु की प्रथम कृति 'बटबाबा' १९४४ में प्रकाशित एक रेखाचित्र परक कहानी है, जिसमें गांव के एक प्राचीन वटवृक्ष की जीवनी शक्ति का अंकन है; जो विपरीततम परिस्थितियों में भी गांव के लोगों की आशा, आस्था और आनंद का केन्द्र बना रहता है। वट वृक्ष के काटे और गिराए जाने का मार्मिक अंकन, मनुष्य और प्रकृति के आत्यंतिक संबंध की व्याख्या करता है, तथा अप्रत्यक्ष रूप से आज की नई पीढ़ी के द्वारा किये जा रहे पुराने मूल्यों